मध्य प्रदेश व्यावसायिक परीक्षा मण्डल
(PEB) द्वारा आयोजित

AGRAWAL EXAMCART
Paper Pakka Fasega!

मध्य प्रदेश पटवारी भर्ती परीक्षा

विगत वर्षों के पेपर्स के विश्लेषण चार्ट का समावेश।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं पंचायती राज

(पाठ्यक्रमानुसार सम्पूर्ण अध्ययन पुस्तक)

"अब ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं पंचायती राज से सम्बंधित सभी अध्यायों को आसानी से पढ़ो एवं समझो और प्रश्नों को सरलता से हल करो।"

मुख्य विशेषताएँ

थ्योरी

ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं पंचायती राज के पाठ्यक्रम, विगत परीक्षाओं के प्रश्नों एवं नवीनतम योजनाओं, आंकड़ों और तथ्यों पर आधारित थ्योरी।

प्रश्न

वर्ष 2017 एवं 2018 के पेपर्स के सभी प्रश्नों का अध्यायवार समावेश।

Code	Price	Pages
CB953	₹ 159	176

विषय-सूची

Student's Corner *पृष्ठ संख्या*

- ⊙ **Agrawal Examcart Help Centre** iv
- ⊙ **Best Strategy** परीक्षा की तैयारी करने का सही तरीका! v
- ⊙ **Current Affairs!** की 100% सटीक तैयारी कैसे करें ? vi
- ⊙ मध्य प्रदेश पटवारी का परीक्षा पाठ्यक्रम एवं परीक्षा पैटर्न vii
- ⊙ मध्य प्रदेश पटवारी परीक्षा के पिछले वर्षों के हल प्रश्न-पत्रों का विश्लेषण चार्ट viii

ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं पंचायती राज **1-178**

1.	कृषि का प्रारंभ एवं भूमि सुधार	1-30
2.	कृषि एवं पशुपालन	31-60
3.	सिंचाई संसाधन एवं परियोजनाएँ	61-76
4.	विभिन्न सरकारी योजनाएँ	77-94
5.	सामाजिक समावेश	95-103
6.	ग्रामीण अर्थव्यवस्था : बेरोजगारी एवं ग्रामीण कल्याण गतिविधियाँ	104-120
7.	राजव्यवस्था/स्थानीय स्वशासन	121-144
8.	मध्य प्रदेश में मृदा	145-148
9.	मध्य प्रदेश में वन	149-158
10.	राजस्व प्रशासन तथा पटवारी के कार्य व भूमि मापन	159-167
11.	मध्य प्रदेश में उद्योग	168-178

अध्याय

5 सामाजिक समावेश

- भारतीय समाज अत्यन्त प्राचीन व जटिल है। इसके पास वह सामाजिक विरासत है जो इसे अप्रवासी आर्यों से तथा मूल द्रविड़ों और आक्रमणकारी सभ्यताओं से प्राप्त हुई।
- भरत की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विविधताएँ यहाँ की ग्रामीण व शहरी निवास की दशाओं में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती हैं।
- रोम, यूनान, सुमेर, बैबीलोनिया आदि की संस्कृतियाँ समय के प्रवाह में कहाँ बह गईं, मालूम नहीं, जो कुछ रह गया वह केवल इतिहास के पृष्ठों पर अंकित है, परन्तु भारतीय समाज व संस्कृति आज भी जीवित है। यह जीवित है अपनी विशिष्टताओं के कारण।
- **राधाकमल मुखर्जी** (Radhakamal Mukherji) ने लिखा है, ''अन्य समाजों की तुलना में भारतीय समाज की विशेषता यही है कि हमारा बाह्य कानूनों, नीतियों और बन्धनों पर सबसे कम निर्भर है।
- भारत में तो प्रथा, परम्परा तथा अन्य संस्थागत व्यवस्था के द्वारा ऐसे सच्चरित्र व्यक्तियों के निर्माण करने का प्रयत्न हुआ, जो सबके जीवन में समभागी होने के कारण और सामान्य मानवों से तादात्म्य स्थापित कर लेने के कारण अपने प्रभाव से उत्कृष्ट और न्यायोचित समाज की रचना करने में समर्थ होते हैं।''

भारतीय समाज

- भारतीय समाज एक अत्यन्त प्राचीन समाज है एवं अपने आपमें जटिलता लिए हुए है। इसका इतिहास लगभग पाँच हजार वर्षों का है।
- भारतीय धर्म, दर्शन, कला, अर्थव्यवस्था, परिवार व विवाह आदि–आदि व्यवस्थाएँ भारतीय सामाजिक इतिहास में महत्वपूर्ण कही जा सकते हैं। यह प्रयोग प्राचीनकाल से ही आरम्भ होता है।
- जिस समय विश्व का अधिकांश मानव अज्ञानता के अंधकार में पाशविक जीवन व्यतीत कर रहा था, उस समय का साहित्य, कला, धर्म तथा दर्शन विकास की ओर निरन्तर बढ़ता जा रहा था। इसलिए भारतीय समाज ने विश्व के समाज वैज्ञानिकों को अपनी ओर आकर्षित किया।

समाज क्या है ?

- साधारणतया लोग समाज शब्द का प्रयोग व्यक्तियों के संगठन, सामाजिक या धार्मिक समुदाय, जाति या प्रजाति आदि के सन्दर्भ में कर लिया करते हैं। जैसे–दलित समाज, ग्रामीण समाज, हिन्दू समाज, आर्य समाज आदि। ऐसा प्रयोग समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से वैज्ञानिक नहीं है।
- समाज की अवधारणा को अन्य सामाजिक विज्ञानों में भी उजागर किया गया है। जैसे–अर्थशास्त्र में समाज का अभिप्राय एक खास तरह की आर्थिक क्रियाएँ करने वाले 'व्यक्तियों के आर्थिक समूह' से समझा जाता है।
- राजनीतिशास्त्र में समाज की अवधारणा को 'एक राजनीतिक समूह' के रूप में स्पष्ट किया जाता है। मनोविज्ञान में समाज का अभिप्राय मानसिक अन्तक्रियाओं को करने वाले समूह से है।
- मानवशास्त्र में समाज अर्थ जनजातीय समुदायों से लगाया जाता है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से यह अर्थ वैज्ञानिक नहीं है।
- समाजशास्त्र में समाज को सामाजिक सम्बन्धों की व्यवस्था के रूप में स्पष्ट किया गया है। इस सन्दर्भ में कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं–

(i) **आर. एम. मैक्ईवर** एवं **सी. एच. पेच** ने समाज को बहुत ही स्पष्ट रूप में परिभाषित किया है। उनके अनुसार, ''समाज रीतियों और कार्य–प्रणालियों, अधिकार और पारस्परिक सहायता, अनेक समूहों और उप–विभागों, मानव व्यवहार के नियन्त्रणों एवं स्वतन्त्रताओं की व्यवस्था है। इस निरन्तर परिवर्तित होने वाली जटिल व्यवस्था को हम समाज कहते हैं।''

इस परिभाषा से निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं–

(a) समाज सामाजिक सम्बन्धों की एक व्यवस्था है।

(b) इस व्यवस्था का निर्माण रीतियों, कार्यप्रणालियों, अधिकार, पारस्परिक सहायता, समूहों, नियन्त्रणों व स्वतन्त्रताओं से होता है।

(c) यह व्यवस्था परिवर्तनशील है।

(ii) **एम. गिन्सबर्ग** ने समाज को परिभाषित करते हुए लिखा है, ''समाज व्यक्तियों का संकलन है जो अनेक सम्बन्धों और व्यवहार की विधियों द्वारा संगठित है तथा उन व्यक्तियों से भिन्न है जो इस प्रकार के सम्बन्धों द्वारा बँधे नहीं हैं।''

(a) समाज व्यक्तियों का एक संगठन है।

(b) समाज औपचारिक सम्बन्धों से बँधा है। यहाँ गिडिंग्स का अनौपचारिक सम्बन्धों को अस्वीकारना सही नहीं दिखता है। समाज के लिए औपचारिक व अनौपचारिक दोनों सम्बन्धों का महत्व है।

- इन उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि आज अधिकांश समाजशास्त्री समाज को सामाजिक सम्बन्धों की व्यवस्था के रूप में ही स्वीकार करते हैं। सामाजिक सम्बन्धों का आधार सामाजिक अन्तःक्रिया (Social Interaction) है। यह अन्तःक्रिया तीन स्तरों पर होती है–

(i) व्यक्ति–व्यक्ति के मध्य

(ii) व्यक्ति–समूह के मध्य और

(iii) समूह–समूह के मध्य। इन्हीं अन्तःक्रियाओं के फलस्वरूप जिन सामाजिक सम्बन्धों का निर्माण होता है, उसे समाज कहा जाता है।

भारतीय समाज की विशेषताएँ या लक्षण

भारतीय समाज विभिन्न प्रजातियों, धर्मों, भाषाओं, जातियों, जनजातियों, संस्कारों, सामाजिक प्रथाओं, सांस्कृतिक विश्वासों, राजनीतिक दर्शन, विचारधाराओं एवं मान्यताओं आदि का संगम–स्थल है। इसमें विभिन्न प्रकार के तत्वों का सुन्दर समन्वय देखने को मिलता है। इन विभिन्नताओं से भारतीय–समाज के सौन्दर्य में निखार आया है। इसी सन्दर्भ में भारतीय समाज की विशेषताओं का उल्लेख किया जा सकता है, जो निम्न प्रकार हैं–

(i) **प्राचीनता**–भारतीय समाज विश्व के प्राचीनतम समाजों में से एक है। इसका इतिहास पाँच हजार वर्षों का है। उस समय के अन्य समाज रोम, बेबीलोनिया, मिस्र, यूनान आदि कहाँ लुप्त हो गए, पता नहीं। उसके अवशेष ही बचे हैं, परन्तु भारतीय समाज आज भी उन्नत स्थिति में है। इसका मूल आधार जीवित है।

(ii) **विविधता में एकता**–भारतीय समाज विभिन्न प्रजातियों, धर्मों, जातियों, जनजातियों, भाषाओं, सांस्कृतिक विश्वासों, सामाजिक प्रथाओं, राजनीतिक दर्शनों एवं विचारधाराओं का संगम–स्थल है। भारतीय संविधान में 22 प्रमुख भाषाओं को मान्यता प्राप्त है, किन्तु लगभग 1,652 भाषाएँ एवं बोलियाँ यहाँ बोली जाती हैं। यहाँ विभिन्न धर्मों (हिन्दू, इस्लाम, ईसाई, सिख, जैन एवं अन्य) के अनुयायी हैं। भारत में लगभग 3,000 जातियाँ एवं विभिन्न जनजातियाँ हैं। भारतीय जनसंख्या विविध प्रजातियों का मिश्रण है तथ्य विविधता को उजागर करते हैं। इन विविधताओं के बीच एक मौलिक एकता है कि हम सब भारतीय हैं। यह भावना भारतीय समाज की विविधता में एकता बनाये हुए है।

(iii) **वर्ण–व्यवस्था**–भारतीय समाज का एक प्रमुख अंग वर्ण–व्यवस्था रही। यह व्यवस्था मनुष्य के स्वभाव के अनुसार काम करने की स्थिति की ओर निर्देश देती है। समाज का चार वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र) में विभाजन श्रम पर आधारित था। ब्राह्मण पुजारी के रूप में, क्षत्रिय शासक व योद्धा के रूप में, वैश्य व्यापारी के रूप में तथा शूद्र सेवक के रूप में कार्य करते थे, किन्तु वर्णों में खान–पान, सामाजिक सम्बन्धों एवं विवाह सम्बन्धों में प्रतिबन्ध नहीं थे, यहाँ तक कि एक वर्ण से दूसरे वर्ण में परिवर्तन के लिए प्रतिबन्ध नहीं थे। व्यक्ति अपने कर्म के द्वारा यह परिवर्तन करता था। बाद में, वर्ण विभाजन का आधार जन्म हो गया, फलस्वरूप जातियों का विकास हुआ।

(iv) **जाति–व्यवस्था**–भारतीय समाज की एक अपूर्व विशेषता जाति–व्यवस्था है। जातियाँ जन्म पर आधारित अन्तर्विवाही समूह हैं, जिनके निश्चित व्यवसाय होते हैं, खान–पान एवं सामाजिक सम्पर्क सम्बन्धी निषेधों का पालन करते हैं। भारत में लगभग 3,000 जातियाँ हैं। ये जातियाँ चार वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र) से जुड़ी हुई हैं। जाति में परिवर्तन सम्भव नहीं है। इस अर्थ में यह व्यवस्था काफी कठोर है। व्यक्ति के कर्म, उपलब्धि व योगदान कितना भी उच्च कोटि व निम्न कोटि का क्यों न हो, उसकी जाति नहीं बदल सकती है।

(v) **संयुक्त परिवार**–भारतीय समाज की आधारभूत इकाई संयुक्त परिवार रहा है। यह वह परिवार है जिसमें दो से अधिक पीढ़ियों के लोग रहते हैं, जो एक घर में निवास करते हैं, एक रसोई का बना खाते–पीते हैं, जिनकी सम्पत्ति व पूजा संयुक्त होती है और जो नातेदारी सम्बन्धों से बँधे होते हैं। ऐसे परिवार में कर्त्ता का स्थान सर्वोपरि होता है उनके आदेशों का पालन अनिवार्य होता है।

(vi) **ग्रामीण समुदाय**–भारतीय समाज की आधारभूत इकाई ग्रामीण समुदाय है। इसकी अधिकांश आबादी गाँवों में निवास करती है। इसलिए भारत को गाँवों का देश कहा जाता है। भारतीय ग्रामीण समुदाय एक निश्चित क्षेत्र के अन्तर्गत रहने वाला वह समूह है जहाँ अनौपचारिक व प्राथमिक सम्बन्ध पाए जाते हैं, जिनमें हम की भावना, कृषि की प्रधानता, प्रकृति से सम्बन्ध, सरलता, समानता एवं सादगीपन होता है। भारतीय व्यक्ति की पहचान गाँव, जाति एवं परिवार से ही होती है।

(vii) **आश्रम व्यवस्था**–भारतीय समाज को आश्रम व्यवस्था के माध्यम से भी समझने की चेष्टा की जाती रही है। इसके अनुसार मानव जीवन को चार आश्रमों में बाँटा गया है–ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं संन्यास। प्रथम अवस्था ब्रह्मचर्य आश्रम में ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए गुरु के संरक्षण में अध्ययनरत् रहना पड़ता था। उसके बाद विवाह करके दूसरी अवस्था गृहस्थ आश्रम में व्यक्ति प्रवेश करता था, जिसमें व्यक्ति एक गृहस्थ जीवन के कर्त्तव्यों की पूर्ति करता हुआ वंश चलाता था। फिर तीसरी अवस्था वानप्रस्थ आश्रम में व्यक्ति प्रवेश करता था जहाँ व्यक्ति से उम्मीद की जाती थी कि वह धीरे–धीरे स्वयं को गृहस्थ जाल से बाहर करेगा और अपना अधिक समय धार्मिक पुस्तकों के पठन–पाठन व मनन में लगाएगा। अन्त में, चौथी अवस्था संन्यास आश्रम में प्रवेश करता था, जहाँ उसे संसार का त्याग करना होता था। इस अवस्था में वह संन्यासी का जीवन व्यतीत करते हुए अपने अनुभवों से संसार को सत्य मार्ग से परिचित कराता था।

(viii) **संस्कार**–भारतीय समाज अनेक तरह के संस्कारों से जुड़ा है। ये संस्कार व्यक्ति के गर्भधारण से प्रारम्भ होते हैं तथा मृत्यु के बाद तक चलते हैं। उदाहरणस्वरूप, गर्भाधान संस्कार, छट्ठी संस्कार, नामकरण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, उपनयन, वेदारम्भ, विवाह, श्राद्ध एवं वरणी आदि संस्कार हिन्दू के हैं। इसी तरह मुसलमानों में जन्म, विवाह, मृत्यु के अतिरिक्त अनेक संस्कारों के बन्धन हैं।

(ix) **अन्धविश्वासमूलक**–भारतीय समाज अन्धविश्वास धारणाओं से जुड़ा है। कोई भी महत्वपूर्ण कार्य हो उसमें शुभ मुहूर्त का देखा जाना अनिवार्य है। उदाहरणस्वरूप–यात्रा के पहले दिन व दिशा पर विचार, विवाह व गृह–प्रवेश आदि के लिए शुभ मुहूर्त्त का देखा जाना, सत्ता व सुविधा एवं प्रतियोगिता में सफलता आदि के लिए अँगूठी व रुद्राक्ष एवं ग्रहों आदि में विश्वास अन्धविश्वासमूलक धारणाओं के प्रतीक हैं। ये सब न केवल पूर्व के विश्वास हैं, बल्कि आज के आधुनिक भारतीय समाज में भी देखे जाते हैं।

समाज के प्रकार

इस भूमण्डल पर चार प्रकार के समाजों–जनजातीय, कृषक औद्योगिक एवं उत्तर औद्योगिक समाज पाए जाते हैं। अफ्रीकन समाज जनजातीय है, भारतीय समाज कृषक है, जबकि अमेरिकन समाज औद्योगिक है। इन दोनों प्रकार के समाजों की संरचना एवं विशेषताओं का वर्णन निम्नलिखित है।

[I] जनजातीय समाज

जनजातीय समाज आदि समाज की विशेषता है जो मानव इतिहास के आरम्भिक युग में वर्तमान थी, यद्यपि अफ्रीका, एशिया एवं यूरोप के पिछड़े

प्रदेशों में इसे अब भी देखा जा सकता है। इस समाज की संरचना एवं प्रमुख विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं–

(a) आर्थिक संरचना

- जनजातीय समाज में लोग प्राकृतिक पर्यावरण के निकट सम्पर्क में रहते हैं जो उनकी आर्थिक क्रियाओं को निर्धारित करती है। उनकी प्रमुख आर्थिक क्रिया शिकार एवं भोजन इकट्ठा करना होता है।
- कुछ जनजातीय समाज प्रमुखतया शिकार पर ही जीवन निर्वाह करते हैं। कुछ जनजातीय समाज प्रमुखतया शिकार पर ही जीवन निर्वाह करते हैं। कुछ जनजातीय समाज प्रमुखतया शिकार की अपेक्षा भोजन इकट्ठा करने पर अधिक निर्भर होते हैं। कंदमूल, जंगली अन्न एवं फल उनका भोजन होते हैं।
- वृक्षों की छाल एवं पौधों के रेशों को बुनकर चटाइयाँ एवं घर बनाये जाते हैं। लकड़ी को उपकरणों एवं शस्त्रों को बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है।
- जनजातीय समाज में व्यक्तिगत सम्पत्ति, विनिमय एवं ऋण सम्बन्धी संस्थाओं की अनुपस्थिति होती है। निःसंदेह जनजातीय समाज के लोगों के पास अपने व्यक्तिगत उपकरण एवं युद्ध सम्बन्धी सामग्री होती है, परन्तु इन वस्तुओं को व्यक्तिगत सम्पत्ति की संस्था नहीं कहा जा सकता।
- ऋण देने वाली संस्थाओं, विनिमय प्रणाली अथवा सरकारी सहायता की कोई आवश्यकता नहीं होती।

  इस प्रकार जनजातीय समाज में आर्थिक क्रिया के प्रतिमान औद्योगिक समाज की तुलना में सरल अविभेदीकृत होते हैं।

(b) सामाजिक जीवन

- जनजातीय समाज में जीवन सरल एवं समेकित होता है। यह आर्थिक, धार्मिक, शैक्षिक एवं मनोरंजनात्मक श्रेणियों में विभागीकृत नहीं होता जिसके अन्तर्गत आधुनिक समाज में प्रत्येक व्यक्ति अनेक विशिष्ट भूमिकायें निभाता है।
- सामाजिक अंतर्क्रिया प्राथमिक समूह की होती है। व्यवस्था की देखभाल लोकरीतियों एवं लोकाचारों पर अधिक निर्भर करती है, जनजातीय नेताओं के सत्ता पर कम, समूह निन्दा अथवा गम्भीर मामलों में निर्वासन दंड के सामान्य रूप हैं।
- बच्चे का समाजीकरण परिवार एवं दैनिक सम्बन्धों में होता है। प्रत्येक जनजाति को व्यवहार के मानकों का ज्ञान होता है तथा जनजातीय नेताओं का दायित्व होता है कि वह यह देखें कि बच्चे स्वीकृत मानकों के अनुसार व्यवहार करते हैं।
- जनजातीय समाज का आकार लघु होता है एवं यह समरस होता है।
- जनजातीय लोग धार्मिक होते हैं तथा टोटमवाद, जादू एवं वस्तु–पूजा में विश्वास करते हैं। निष्कर्ष रूप में, जनजातीय समाज औद्योगिक समाज जो जटिल, विषम, असमेकित एवं विभेदीकृत होता है, की तुलना में सरल, समरस, समेकित एवं अविभेदीकृत होता है।

[II] कृषक एवं औद्योगिक समाज

- आर्थिक क्रिया के विभिन्न स्वरूपों के आधार पर समाज को कृषक एवं औद्योगीकृत में वर्गीकृत किया जाता है। कृषक समाज में प्रमुख आर्थिक क्रिया कृषि होती है, जबकि औद्योगिक समाज में फैक्टरी उत्पादन आर्थिक क्रिया का प्रमुख रूप होता है। आज भी विश्व जनसंख्या का दो–तिहाई से तीन–चौथाई भाग कृषक समाजों में रहता है।
- आदिम व्यक्ति परिवार एवं रक्त बंधनों के आधार पर निर्मित छोटे–छोटे गिरोहों (bounds) में रहते थे। उनकी अर्थव्यवस्था में अधिकांशतया शिकार, भोजन को इकट्ठा करना, मत्स्यपालन सम्मिलित थे।
- नवपाषाण क्रान्ति ने समाज के इतिहास में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये जिसके सम उदाहरण औद्योगिक क्रान्ति में ही देखा जा सकता है।
- नवपाषाण युग लगभग 13,000 वर्ष पूर्व निकटवर्ती पूर्व एवं नील घाटी में आरम्भ हुआ। तीन अथवा चार हजार वर्ष पूर्व यह केन्द्रीय एवं पश्चिमी यूरोप में प्रसारित हुआ।
- इस युग के दौरान लोगों के पाषाण निर्मित उपकरणों को पॉलिश करना एवं उनमें तीखे काटने वाले किनारे बनाना आरम्भ किया तथा बर्तन बनाने एवं गूथने की कलाओं का आविष्कार किया, परन्तु यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नहीं था। पौधों एवं पशुओं के पालन ने कृषक समाज की नींव रखी।
- कृषि के विकास से सामाजिक संरचना एवं संस्थाओं में परिवर्तन आया। अर्थ व्यवस्था की नई शैली से जनसंख्या की द्रुत वृद्धि सम्भव हुई। इसने अधिक स्थायी निवासों को भी जन्म दिया।
- लोगों ने देहातों की उत्पत्ति की जिससे सामाजिक संरचना एवं सामाजिक नियन्त्रण के नये स्वरूपों की आवश्यकता अनुभव हुई। कृषक समाज की संरचना एवं विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

  (a) व्यावसायिक संरचना–कृषक समाज मुख्यतया पौधों एवं पशुओं के पालन से सम्बद्ध है। पौधों के पालन का अर्थ है कृषि तथा पशुओं का रख–रखाव। बहुधा कृषि एवं पशुओं यथा गाय, बकरी एवं भेड़ जैसे पालतू पशुओं के प्रयोग मिश्रित कार्य होते हैं, परन्तु कृषि एवं पशुपालन के अतिरिक्त कृषक समाज में लोगों की अन्य आर्थिक क्रियाएँ भी होती हैं।

  (b) कृषक समाजों में भू–स्वामित्व का रूप–सामान्यतया इस समाज में भूस्वामी, पर्यवेक्षी कृषक, काश्त एवं फसल भागीदार होते हैं। भूस्वामी भूमि के स्वामी होते हैं, परन्तु स्वयं काश्त नहीं करते। वे भूमि को फसल भागीदारी के लिए दे देते हैं। पर्यवेक्षी कृषक वह होते हैं जो अपनी भूमि को श्रमिकों से काश्त करवाते हैं। काश्तकार स्वयं अपनी भूमि पर काश्त करता है। फसल भागीदार वे व्यक्ति होते हैं, जो दूसरों की भूमि पर काश्त करके फसल का भाग प्राप्त करते हैं। शिल्पी उत्पादन के साधनों का स्वामी होता है एवं अपने श्रम से उत्पादन करता है। व्यापारी वस्तुओं का लघुमात्रा में क्रय–विक्रय करते हैं।

  (c) अनौपचारिक सामाजिक नियन्त्रण–कृषक समाज में देहातों की प्रधानता होती है। ग्रामीण समुदाय में परम्परीय व्यवहार नियमों का मुख्य स्थान होता है। प्रत्येक व्यक्ति एक–दूसरे को पहचानता है। ग्रामीण समुदाय के लोग एक–दूसरे की सहायता करते हैं तथा एक–दूसरे के सुख एवं दुःख में भाग लेते हैं। अपराध की मात्रा कम होती है। दण्ड अनौपचारिक प्रकार की निंदा, अफवाह एवं बहिष्कार होता है।

  (d) सादगी एवं एकरूपता–कृषक समाज में लोगों के जीवन में सादगी एवं एकरूपता होती है। कृषक, प्राकृतिक शक्तियों के

प्रति भयभीत होता है; क्योंकि उसकी कृषि प्रकृति की दया पर निर्भर होती है। वह प्राकृतिक शक्तियों की पूजा करता है। कृषक समाज धार्मिक समाज होता है। इसके अतिरिक्त कृषकों की जीवन शैली सरल होती है। उनका भोजन, उनके तत्व एवं मकान सादे होते हैं। वे औद्योगिक सभ्यता के दोषों से दूर रहते हैं।

निष्कर्ष में यह भी उल्लेख करना उपयुक्त होगा कि हमारे समय में कृषक समाज औद्योगिक समाज की विशेषताओं से अधिकतर प्रभावित हो रहा है। कृषक अब अतिरिक्त वस्तुओं का उत्पादन करते हैं जिन्हें वे मंडी में विक्रय करते हैं, औद्योगिक युग की मुद्रा व्यवस्था का उपयोग करते हैं तथा कर भुगतान एवं मतदान के माध्यम से देश की राजनीतिक व्यवस्था में भाग लेते हैं। यांत्रिक कृषि के आगमन से एवं लाभ पर दृष्टि केन्द्रित हो जाने से कृषक समाज के सामाजिक संगठन पर अति प्रभाव हुआ है। भारतीय समाज का जो कृषक समाज है, औद्योगीकरण के प्रभावाधीन परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। नगरीकरण का प्रभाव बढ़ता जा रहा है, ग्रामवासियों की जीवन–शैली बदल रही है एवं उनके विचारों में परिवर्तन हो रहा है।

(e) **ग्रामीण समुदाय व्यवस्था**—कृषक समाज में ग्रामीण समुदाय प्रणाली की संस्था पायी जाती है। कृषक अर्थव्यवस्था के कारण आवास हेतु मकानों की आवश्यकता अनुभव की गई। सुरक्षा एवं सहयोग हेतु एक–दूसरे के एवं भूमि के निकट रहने से कृषक ग्रामों का जन्म हुआ। ग्राम कृषकों का केवल आवासीय स्थान ही नहीं है, अपितु इसे सामाजिक समेकनकर्ता भी कहा जा सकता है। यह सामाजिक जीवन का केन्द्रिक स्थान होता है एवं व्यक्ति ग्राम में अपना पूर्ण जीवन जीते हैं। लोगों के जीवन–प्रतिमान स्थिर होते हैं उनकी आदतें, अभिवृत्तियाँ एवं उनके विचार औद्यागिक समाज में वासी व्यक्तियों से भिन्न होते हैं।

(f) **न्यूनतम श्रम विभाजन**—कृषक समाज की अन्य संरचनात्मक विशेषता न्यूनतम श्रम विभाजन से है। लिंग एवं आयु पर आधारित मूल विभाजन के अतिरिक्त विशेषीकृत भूमिकाएँ बहुत कम होती हैं। केवल एक ही व्यवसाय प्रमुख होता है, अर्थात् पौधों एवं पशुओं का पालन। सभी व्यक्तियों के लिये पर्यावरण, भौतिक एवं सामाजिक समान होता है। कृषक समाज समरस होता है जहाँ लोगों की एक ही प्रकार की आर्थिक क्रिया होती है।

(g) **परिवार की भूमिका**—कृषक समाज की एक विशेषता परिवार की भूमिका है जो न केवल प्रजनन एवं बाल पोषण इकाई के रूप में अपितु आर्थिक इकाई के रूप में भी कार्य करता है। अनेक समाजों में व्यक्ति नहीं, अपितु सम्पूर्ण परिवार समूह के रूप में भूमि को जोतता है एवं फसल की कटाई करता है तथा अन्य आवश्यक कृषि सम्बन्धी कार्य मिल–जुलकर करता है। कृषक परिवार पितृसत्तात्मक होता है। परिवार की प्रस्थिति व्यक्ति की प्रस्थिति को निर्धारित करती है। विवाह, धर्म, मनोरंजन एवं व्यवसाय के बारे में निर्धारित परिवार मानक होते हैं।

(h) **एकता की भावना**—कृषक समाज के सदस्यों में अंतःसमूह की भावना होती है, क्योंकि उनका सम्पूर्ण जीवन एक ऐसे समाज में जो भौतिक, आर्थिक एवं सामाजिक रूप से समरस है, ये समावेशित होता है, अतः व सम्पूर्ण बाह्य संसार को बाह्य समूह समझते हैं। उनमें सशक्त 'हम भावना' होती है।

समाज का स्वरूप

- समाज के स्वरूप का प्रश्न व्यक्ति और समाज के सम्बन्ध के प्रश्न से बहुत सम्बन्धित है।
- प्राचीन काल में अरस्तू ने कहा था कि मनुष्य स्वभाव से ही सामाजिक प्राणी है और जो मनुष्य समाज में नहीं रहता, वह या तो ईश्वर है या जंगली पशु है।
- मनुष्य को सामाजिक प्राणी कहने के साथ ही हमारे सामने यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि मनुष्य किस दृष्टि से सामाजिक प्राणी है? हम समाज पर किस प्रकार निर्भर हैं? दूसरे शब्दों में मनुष्य तथा सामाजिक व्यवस्था के बीच किस प्रकार के सम्बन्ध हैं?

समाज के सिद्धान्त

- व्यक्ति तथा समाज के सम्बन्धों के बारे में मुख्यतः दो सिद्धान्त हैं जिनका अनेक विद्वानों ने समर्थन किया है।
- एक सिद्धान्त सामाजिक संविदा (Social contract) का है और दूसरा सावयवी विकास (organic theory) का सिद्धान्त है।
- सामाजिक संविदा के सिद्धान्त का वर्णन किया जा चुका है। यहाँ केवल इतना बताने की आवश्यकता है कि सामाजिक संविदा के सिद्धान्त में यह बात निहित है कि प्राकृतिक अवस्था में मनुष्य समाज में रहता था, क्योंकि यदि वह समाज में न रह रहा होता तो उसके मन में वे विचार तथा भावनाएँ उत्पन्न न होतीं जिनके परिणामस्वरूप उसने सामाजिक समझौता किया।

[I] समाज का सावयवी सिद्धान्त

- यह सिद्धान्त भी अरस्तू तथा प्लेटो के जमाने का है। प्लेटो ने समाज या राज्य की तुलना एक वृहत् मनुष्य से की। उसने मनुष्य की तीन विशेषताओं–बुद्धिमत्ता, साहस तथा इच्छा के आधार पर समाज को तीन भागों–शासक, योद्धा तथा कारीगरों में बाँटा।
- अरस्तू ने राज्य की तुलना एक शरीर से की और बताया कि मनुष्य समाज का अभिन्न अंग है। **स्पेन्सर** का कहना है कि राज्य के विकास तथा पतन पर वही नियम लागू होते हैं, जो मनुष्य के विकास तथा पतन पर लागू होते हैं।
- राज्य की भी किशोरावस्था, युवावस्था तथा मृत्यु होती है। मनुष्य की ही भाँति राज्य के भी सहायक अवयव होते हैं।
- ''मजदूर, खेती करने वाले व्यक्ति, खानों तथा कारखानों में काम करने वाले व्यक्ति, समाज के पोषक (alimentary) अंग हैं
- थोक व्यापारी, खुदरा दुकानदार, बैंकर, रेलवे तथा स्टीम से चलने वाले जहाजों में काम करने वाले व्यक्ति समाज में उसी तरह हैं, जैसे मनुष्य के शरीर में रक्तवाहिनी नलिकाएँ हैं।
- डॉक्टरों, वकीलों इन्जीनियरों, शासकों, पुरोहितों आदि का समाज में वही महत्त्व है जो मनुष्य के शरीर में मस्तिष्क तथा नाड़ी–संस्थान का होता है'' मूरे (Murray) ने व्यक्ति तथा समाज में स्पेन्सर द्वारा बताये गये आधार पर कुछ समानताएँ इस प्रकार प्रकट की हैं।
  - (i) दोनों छोटे–छोटे एककों से आरम्भ होकर बढ़ते हैं।
  - (ii) ज्यों–ज्यों उनका विकास होता जाता है, त्यों–त्यो उनकी आरम्भिक सापेक्ष सरलता के स्थान पर उनमें अधिकाधिक जटिलता पैदा होती जाती है।

(iii) ज्यों–ज्यों उनमें अधिकाधिक भिन्नता बढ़ती जाती है, त्यों–त्यों उनके विभिन्न भागों में अधिकाधिक पारस्परिक निर्भरता बढ़ती जाती है। प्रत्येक का जीवन तथा सामान्य क्रिया सम्पूर्ण जीवन पर निर्भर हो जाते हैं।

(iv) सम्पूर्ण का जीवन उनके विभिन्न अंगों के जीवन से बिलकुल अलग हो जाता है।

- उपर्युक्त समानताओं के आधार पर स्पेन्सर ने यह निष्कर्ष निकाला कि राज्य एक जीव है–एक सामाजिक जीव। व्यक्ति समाज के अंग हैं और शरीर के कोषों की भाँति कार्य करते हैं जिनके कार्य तथा जीवन का उद्देश्य सम्पूर्ण शरीर का हित करना होता है।
- जिस प्रकार अंगों को शरीर से पृथक् कर देने पर उनमें जीवन–नहीं रह जाता, उसी प्रकार व्यक्ति को समाज से अलग करने पर उसमें जीवन नहीं रह जाता। व्यक्ति समाज के अन्दर ही रहते हैं।
- **आलोचना** Criticism निश्चित ही समाज तथा जीवन में महत्वपूर्ण समानताएँ हैं; परन्तु साथ ही दोनों में महत्वपूर्ण भेद या अन्तर भी हैं। हर्बर्ट स्पेन्सर ने स्वयं इन भेदों की ओर ध्यान दिया था और इन्हीं के आधार पर उसने राज्य के व्यक्तिवादी सिद्धान्त (indvidualistic theory) की रचना की। समाज तथा व्यक्ति के अवयव में उसने निम्नलिखित अन्तर प्रकट किये।

(i) समाज का कोई ऐसा विशिष्ट रूप नहीं है जिसकी किसी व्यक्ति के शरीर से तुलना की जाय।

(ii) समाज के अंग अपनी–अपनी जगहों पर उस तरह स्थिर नहीं हैं, जैसे मनुष्य के शरीर के अंग।

(iii) समाज की इकाई अलग–अलग व्यक्ति होते हैं और व्यक्ति के शरीर के कोषों की भाँति वे शरीर से संयुक्त नहीं होते।

(iv) समाज में कोई ''सामान्य–ज्ञान–केन्द्र'' (common sensorium) नहीं होता; बोध तथा ज्ञान का कोई केन्द्रीय अवयव नहीं होता, जैसाकि मनुष्य के शरीर में होता है।

इसके अतिरिक्त समाज तथा मनुष्य के शरीर में और भी कई अन्तर हैं। यह कथन ठीक नहीं है कि समाज का जन्म भी वैसे ही हुआ है, जैसे मनुष्य का होता है। हम जानते हैं कि मनुष्य का जन्म तब होता है जब पुरुष का एक कोष स्त्री के एक कोष में मिलता है, परन्तु समाज के सम्बन्ध में यह बात चरितार्थ नहीं होती। सच तो यह है कि सावयव सिद्धान्त समाज पर केवल एक रूपक के रूप में लागू होता है, वास्तविक रूप में नहीं। समाज न तो जीव है और न ही जीव हो सकता है। यह एक जीव की भाँति है। यह मानसिक प्रणाली है, शारीरिक प्रणाली नहीं। समाज का कोई शरीर नहीं होता; यह एक मानसिक संरचना और सम्मिलित प्रयोजनों के लिए मानसिक संगठन है।

[II] समूह–मन सिद्धान्त

- समूह–मन सिद्धान्त या आदर्शवादी सिद्धान्त का सावयव सिद्धान्त से बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्लेटो, हीगल, बोसांके आटो गिर्के और मैक्डूगल जैसे विद्वानों ने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है।
- प्लेटो ने समाज को एक 'बृहत् मन' माना है और बुद्धिमत्ता, साहस तथा इच्छा के आधार पर उसने समाज को तीन भागों–शासक, योद्धा तथा कारीगर में बाँटा है, परन्तु समाज तथा मनुष्य के मन की यह तुलना एक रूपक के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।
- **बोसांके** हीगल के बाद टी.एच. ग्रीन, एफ.एच. ब्रैडले और बी. बोसांके ने इस मत का समर्थन किया। **बोसांके** के कथनानुसार ''राज्य सभी नागरिकों के मन का मिला–जुला सार है।'' किसी निश्चित राज्य–क्षेत्र तथा किसी प्रभुसत्ता के अधीन रहने वाले लाखों पुरुषों व स्त्रियों को ही राज्य नहीं कहा जा सकता, बल्कि राज्य एक समूह–मन है। किन्हीं सम्मिलित प्रयोजनों के लिए संयुक्त हो जाने पर मनों का समूह, मन–समूह बन जाता है।
- **मैक्डूगल** समूह–मन के विचार की मैक्डूगल ने पुष्टि की। 1920 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'दि ग्रुप माइण्ड' में उसने लिखा, 'समाज एक योग (व्यक्तियों का) है उसका पृथक् व्यक्तित्व है और एक सच्ची इकाई है जो कि बहुत अधिक सीमा तक अपने अंगों की गतिविधि का ढंग तथा उसका स्वरूप निर्धारित करता है। यह एक पूर्ण जीव है।'' अतः सामाजिक योग का एक सामूहिक मानसिक जीवन होता है, जो कि उसकी इकाइयों के मानसिक जीवन का योग मात्र नहीं होता है। यह कहा जा सकता है कि समाज में केवल सामूहिक जीवन ही नहीं होता, बल्कि सामूहिक मन या कुछ लोगों के कथनानुसार 'सामूहिक आत्मा' भी होती है। मैक्डूगल ने आगे लिखा है, ''समुदाय की आत्मा का स्वरूप तथा गठन हर प्रकार से उतना ही पूर्ण मानसिक या भौतिक है जितना कि व्यक्ति के मन का ढाँचा तथा गठन होता है।'' इस प्रकार मैग्डूगल तथा बोसांके के विचार लगभग एक–से ही हैं। दोनों का कहना है कि समाज केवल अपने सदस्यों के कुछ गुणों या लक्षणों को प्रकट करने वाला एक समूह मात्र नहीं है, बल्कि स्वयं एक मन तथा एक यथार्थ है।
- **आलोचना**—हॉबहाउस, लास्की तथा मैकाइवर जैसे विद्वानों ने समूह–मन सिद्धांत की कटु आलोचना की है। मैकाइवर का कहना है कि ''यदि हम किसी समूह–मन की चर्चा करते हैं, तो इस सम्बन्ध में हमारे पास कोई तथ्य या प्रमाण नहीं होते, अतः हमें यह कल्पना करने का कोई अधिकार नहीं है कि वह एक ही ढंग से महसूस करने वाले या सोचने वाले समान ढंग से प्रतिक्रिया करने वाले और एक जैसे या सम्मिलित हितों से प्रभावित होने वाले समाज के सदस्यों के मन से कुछ भिन्न चीज है।

भाषा तथा समाज

- मनुष्य स्वभावतः सामाजिक प्राणी है। उसके स्वभाव का यह मूल लक्षण है कि छोटे या बड़े प्रयोजनों की प्राप्ति–हेतु वह अपने साथियों के साथ संगठित हो जाता है।
- अपने साथियों की बात समझने के लिए और उन्हें अपनी बात समझाने के लिए मनुष्य ने भाषा बनाने का प्रयत्न किया जिसके बिना वे पारस्परिक विचारों का आदान–प्रदान नहीं कर सकते थे।
- संचार की इच्छा भाषा के निर्माण का मुख्य कारण थी। ''आवश्यकता आविष्कार की जननी है'' यह कहावत भाषा के इतिहास पर पूरी तरह लागू होती है। दैनिक जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए भाषा का सर्वप्रथम प्रयोग किया गया।
- **चार्ल्स विनिक** ने भाषा की परिभाषा इस प्रकार की है, ''भाषा स्वेच्छ वाक्चिह्नों की वह व्यवस्था है जिसका प्रयोग सामाजिक समूह के सदस्य या वाणी–समुदाय विचारों और भावनाओं को प्रकट करने के लिए करते हैं जिससे वे अंतःक्रिया एवं सहयोग के योग्य हो जाते हैं।'' यह मौखिक अभिव्यक्ति का माध्यम है।

ग्रामीण आर्थिक संरचना की अवधारणा

- सम्पूर्ण ग्रामीण संरचना का यदि हम विश्लेषण करें तो हमें सहज ही ज्ञात होता है कि ग्रामीण समाज में जो आज विभिन्न प्रकार के मूल्य, विश्वास, आदर्श, धर्म, अन्धविश्वास, सोच और मानसिकता हमें दिखाई पड़ती है वे सभी किसी न–किसी रूप में ग्रामीण अर्थ–व्यवस्था से प्रभावित हैं अथवा उसी से प्रभावित होकर उपजे और विकसित हुए हैं।
- ग्रामीण आर्थिक ढाँचे ने सम्पूर्ण रहन–सहन के स्तर और जन–मानस को किसी–न–किसी रूप में प्रभावित किया है। अस्तु ग्रामीण समाजशास्त्र, ग्रामीण आर्थिक संरचना से जुड़े मूल्यों व विचारों को अध्ययन किए बिना हम ग्रामीण जीवन के सामाजिक–आर्थिक और सांस्कृतिक ढाँचे को समझने में असमर्थ रहेंगे।

  डॉ. जी. आर. मदान ने सी. सी. टेलर के ग्रामीण समाजशास्त्र और ग्रामीण अर्थशास्त्र में क्या सम्बन्ध है, इस सम्बन्ध में उनके विचार, 'भारत का ग्रामीण समाज' में देखने को मिलते हैं। ''ग्रामीण समाजशास्त्र तथा ग्रामीण अर्थशास्त्र के मध्य अन्तर की दीवार खड़ी करना कठिन है।
- कृषि लाभों तथा ग्रामीण रहन–सहन के स्तर के मध्य व्यापक सम्बन्ध आर्थिक पृष्ठभूमि व कृषक जीवन के आधार को समझाने की आवश्यकता और प्रत्येक ग्रामीण सामाजिक तथ्य का आर्थिक पहलू और प्रत्येक आर्थिक तथ्य का सामाजिक पहलू होता है। जैसे–कुछ ऐसे विषय हैं कि जिनके कारण कृषि जीवन के सामाजिक तत्त्वों का अध्ययन सामान्य आर्थिक तथ्यों से पृथक् होकर नहीं किया जा सकता है।
- कृषि अर्थशास्त्र का सम्बन्ध विशिष्ट रूप में कृषि सम्पदा, ऋण, लागत, आय एवं क्रय–विक्रय के विषयों में रहता है।
- ग्रामीण समाजशास्त्र का सम्बन्ध इन विषयों से केवल उसी सीमा तक है जहाँ तक यह सामाजिक संगठन या सामाजिक कल्याण को प्रभावित करते हैं।''
- ग्रामीण आर्थिक संरचना का सीधा सम्बन्ध कृषि अर्थ–व्यवस्था और कृषि अर्थशास्त्र से है। डॉ. जी. आर. मदान ग्रामीण कृषि अर्थ शास्त्र के कार्य क्षेत्र के सम्बन्ध में लिखते हुए कहते हैं, ''कृषि अर्थशास्त्र विज्ञान का ही एक परिणाम है। विशेषतः कृषि व्यवस्था के सम्बन्ध में यह अधिक सही है।
- व्यापार स्वाभाविक दशाओं के प्रति कृषि उद्योग का व्यवहार सुव्यवस्थित आर्थिक नियमों एवं सिद्धान्तों के अनुरूप है।
- देश तथा विश्व की अर्थव्यवस्था के चरणों के सम्बन्ध में व्यक्तिगत फार्मों एवं समग्र रूप से कृषि उद्योग के प्रबन्धन करने की व्याख्या में इन आर्थिक नियमों तथा सिद्धान्तों को जितना अधिक सही ढंग से समझा और व्यवहृत किया जाएगा, उत्तम जीवन, अर्थात् अधिक पर्याप्त एवं उत्तम आहार, आवास, वस्त्र, स्वास्थ्य, सुविधाएँ, शिक्षा और जीवन के वास्तविक संतोष की प्रगति के प्रति हमारी प्रगति उतनी ही तेज होगी।
- किसी समाज के लोगों के आर्थिक प्रयासों का प्रमुख उद्देश्य उत्तम जीवन ही होता है।''
- भारत की ग्रामीण आर्थिक संरचना द्वितीय युद्ध के समय छिन्न–भिन्न हो गई। उस समय भारतीय ग्रामीण समाज गम्भीर संकटों का सामना कर रहा था और अंग्रेजी सरकार ने ''सितम्बर 1939 में भारत को एक संघर्षरत देश घोषित कर दिया।
- यह भारत की अर्थव्यवस्था में एक नई अवस्था थी और देश के लिए भारी कठिनाइयाँ लेकर आई थीं।'' **मेवोवोइ** ने इस युग के भारतीय ग्रामीण समाज के आर्थिक ढाँचे का वास्तविक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। ग्रामीण समाज अकाल, भुखमरी, किसानों से जबरन अनाज खरीदना, काला बाजारी, जमाखोरी, इन सबका परिणाम यह हुआ कि अधिकांश किसानों की हालत निरन्तर बिगड़ती गई। युद्ध के कारण होने वाली मुद्रास्फीति से कीमतों में वृद्धि हुई मुद्रास्फीति की परिस्थितियों में इस वृद्धि के बावजूद किसानों की गरीबी व बर्बादी का बढ़ता हुआ सिलसिला चालू रहा।''

व्यावसायिक दृष्टि से श्रम विभाजन

ग्रामीण आर्थिक संरचना के निर्माण में कुछ विशेष व्यक्तियों और विभिन्न जातियों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। सम्पूर्ण ग्रामीण आर्थिक ढाँचा कृषि और कृषि से सम्बन्धित व्यवसायों पर आधारित है। इस दृष्टि से ग्रामीण–आर्थिक तन्त्र को हम निम्नलिखित भागों में विभाजित कर सकते हैं–

(i) **जमींदार या सामंत** ग्रामीण समाज की आर्थिक संरचना का जब हम विश्लेषण करते हैं तो हमें शीर्ष पर जमींदार या सामंत दिखाई पड़ता है। यह बड़ी जमीन का मालिक होता है। जमीन की देखभाल करना, श्रमिकों से काम लेना या उनसे बेगार लेना, कम से कम पारिश्रमिक देकर अधिक से अधिक काम लेना इनका स्वभाव है। श्रम के नाम पर ये कुछ नहीं करते फिर भी सम्पूर्ण ग्रामीण आर्थिक संरचना को किस रूप में अपने स्वार्थों के अनुरूप ढाला जाए इस कार्य में ये सिद्धहस्त हैं।

(ii) **भूमिहीन श्रमिक** कृषि–व्यवसाय में भूमिहीन श्रमिकों की सीधी भागीदारी है। खेत के जोतने, बोने और काटने का दायित्व इन्हीं श्रमिकों पर होता है, पर पारिश्रमिक के नाम पर इन्हें इतनी मजदूरी दी जाती है कि ये अपने परिवार की आवश्यक आवश्यकताओं को भी पूर्ण नहीं कर पाते हैं। शताब्दियों से ये शोषण के शिकार रहे हैं और आज भी हैं। कृषि उत्पादन की मुख्य इकाई होते हुए भी इनकी दशा शोचनीय बनी हुई है।

(iii) **ग्रामीण कारीगर** ग्रामीण समाज में जातिगत कार्य करने की प्रथा है। बढ़ई, कुम्हार, लोहार, सुनार, जुलाहा, आदि ऐसे कारीगर हैं जो ग्रामीण समाज की आवश्यकताओं को पूर्ण करते हैं। बढ़ई का कार्य किसानों के लिए कृषि सम्बन्धी उपकरणों को बनाना है; जैसे–हल, बैलगाड़ी आदि। इसके साथ ही ग्रामीण समाज के घरों में जिन चीजों का प्रयोग होता है उसको भी यह बनाते हैं; जैसे–दरवाजे, खिड़की, तख्त और अलमारी, ये अब विभिन्न प्रकार के फर्नीचर भी बनाने लगे हैं। लोहार भी बढ़ई की भाँति कृषि सम्बन्धी अनेक उपकरणों का निर्माण करता है; जैसे–खेत जोतने, काटने और सिंचाई के लिए उपकरण बनाना।

(iv) **सेवक** सेवक वह वर्ग है जो सेवाओं के मामध्य से अपनी जीविका अर्जित करता है। **पुरोहित** वे हैं जो धर्म सम्बन्धी कार्यों का संचालन करते हैं। सभी प्रकार के संस्कारों, पर्वों और उत्सवों में इनके द्वारा संचालित धार्मिक कार्यों को देखा जा सकता है। **ग्रामीण महाजन** वे हैं जो कृषि कार्य के लिए किसानों को ऊँची ब्याज दरों पर ऋण देते हैं। इसके बाद **सरकारी अधिकारी** वे हैं जो ग्रामीण अर्थ–व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए प्रयासरत् हैं। इनमें सामुदायिक विकास योजना, सहकारी समितियाँ, ग्रामीण बैंक आदि के कर्मचारियों को सम्मिलित किया जा सकता है।

ग्रामीण सम्पत्ति के मुख्य आधार

ग्रामीण क्षेत्रों में सम्पत्ति को कैसे प्राप्त किया जाए और आर्थिक स्थिति को कैसे सम्पन्न बनाया जाए इसके अनेक आधार हो सकते हैं। ये आधार हमें ग्रामीण अर्थव्यवस्था की जानकारी प्रदान करते हैं। सम्पत्ति के निम्न दो रूप हो सकते हैं—(i) चल सम्पत्ति और (ii) अचल सम्पत्ति। हल, बैल, मवेशी, आभूषण चल सम्पत्ति के उदाहरण हैं, जबकि भूमि, मकान आदि अचल सम्पत्ति के उदाहरण हैं। इस चल और अचल सम्पत्ति को प्राप्त करने के अनेक माध्यम हो सकते हैं। इसके मुख्य आधार निम्नलिखित हैं—

(ii) उत्तराधिकार—सम्पत्ति को प्राप्त करने का, भारतीय समाज में यह सबसे महत्त्वपूर्ण साधन है। पिता की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्रों को स्वतः उत्तराधिकार के रूप में सम्पत्ति प्राप्त हो जाती है। यह कानूनी प्रथा गाँव और नगर दोनों में आज भी प्रचलित है।

(iii) विवाह—विवाह के माध्यम से सम्पत्ति भी प्राप्त की जाती है। लड़की के माता–पिता अपनी लड़की के नाम जमीन और मकान तक देते हैं। कभी–कभी अपनी वसीयत में लड़की के नाम एक बहुत बड़ा सम्पत्ति का भाग कर जाते हैं। इसके अतिरिक्त दहेज के रूप में भी सम्पत्ति प्राप्त होती है।

(iv) महाजनों के पास अथाह सम्पत्ति—ग्रामीण कृषकों के लिए यह कहा जाता है कि वह ऋण में जन्म लेता है और ऋण में ही उसकी मृत्यु होती है। यह कहावत शत–प्रतिशत सही है। निर्धन कृषक अपनी भूमि, मवेशी, मकान के नाम पर ग्रामीण महाजनों से ब्याज की ऊँची दर पर ऋण लेता है और जब उसका मूल और ब्याज एक निश्चित अवधि में वह अदा नहीं कर पाता है तो महाजन का उसकी सम्पत्ति पर कानूनी अधिकार हो जाता है। इस तरह ब्याज की ऊँची दर और किसानों की निर्धनता की मजबूरी का लाभ उठाकर ग्रामीण साहूकार और महाजन ग्रामीण सम्पत्ति पर एकाधिकार रखते हैं। यही कारण है कि ग्रामीण समाज में गिने–चुने व्यक्तियों का ग्रामीण आर्थिक व्यवस्था पर एकाधिकार बना रहता है और निर्धन तथा भूमिहीन कृषक दरिद्र होता जाता है। यही कारण है कि सामान्य ग्रामीण व्यक्तियों का रहन–सहन का स्तर अत्यन्त दयनीय और कष्टप्रद है।

(iv) उत्पादन और निर्माण की गई चीजों की बिक्री—यह वह साधन है जिसके माध्यम से साधारण कृषक, कारीगर आज भी जीवित हैं अन्यथा सामंती व्यवस्था में जाने कब आम ग्रामीण चिर निद्रा में, अभावों के कारण सो गया होता। छोटा कृषक अपनी छोटी–सी जमीन पर अनाज उत्पन्न करके वर्ष भर जीने का प्रयास करता है।

राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (RKVY)

- छठी योजना ₹ 25,000 करोड़ की लागत के साथ प्रारम्भ की गई।
- यह योजना राज्यों को, कृषि तथा संबद्ध क्षेत्रों को और अधिक धन बाँटने के लिए प्रोत्साहित करने में सफल रही और योजनाकाल के दौरान सम्बन्धित क्षेत्रों को 4 प्रतिशत वृद्धि दर प्राप्त कराने और उनकी प्राथमिकताओं एवं कृषि–पर्यावरणीय जरूरतों के अनुसार राज्यों को चुनने, योजना बनाने, स्वीकृत करने और वृद्धि को संचालित करने के अधिकार दिए, जिससे हस्तक्षेपों और कृषि की मूलभूत संरचनाओं को उत्पन्न किया और बनाया जा सके।
- आरकेवीवाई की उप–योजनाओं के रूप में संकेन्द्रित लक्ष्यों के साथ ग्यारह विशिष्ट कार्यक्रमों को लागू किया गया।
- ग्यारहवीं योजना के दौरान योजनाओं को लागू करने के लिए ₹ 22,408.77 करोड़ निर्गत किए गए।
- बारहवीं योजना के लिए परियोजना की रूपरेखा ₹ 63,246 करोड़ की है, जिसमें से 2013–14 के दौरान ₹ 8,400 करोड़ जारी किए जा चुके हैं।
- वर्ष 2013-14 के दौरान परियोजना को लागू करने के लिए ₹ 9,954 करोड़ आवंटित किए गए जिसमें से ₹ 3,300 करोड़ ग्यारह विशिष्ट कार्यक्रमों, उप–परियोजनाओं को लागू करने के लिए खर्च किए जा चुके हैं।

(i) कृषि मंत्रालय के अन्तर्गत राष्ट्रीय कृषि विकास योजना

- आरकेवीवाई में आधुनिक प्रस्ताव बीजीआरईआई के तहत किए गए कार्य व गैर–एनएफएसएम जिलों में धान और गेहूँ के लिए क्लस्टर प्रदर्शनी व जल प्रबंधन कार्यों के लिए संसाधन सम्पदा निर्माण; जैसे—डगवेल, शैलों ट्यूबवेल्स, सिंचाई लिफ्टें; यथा—ड्रम सीडर, जीरो टिल सीड ड्रिल, धान प्रत्यारोपण तथा पम्पसेट वनोत्पादन और उपज बढ़ाने के लिए विशिष्ट भूमि विशेष के अनुसार जारी गतिविधियाँ।
- इनमें फसल विकास कार्यक्रम, जल चैनल निर्माण और ऊर्जा इत्यादि गतिविधियाँ भी शामिल हैं। बाजार में सहयोग के लिए प्रारम्भिक संसाधन प्रणाली विधि का निर्माण संवर्धन।
- इसमें फार्मों में भंडारण सुखाना, धान को बोरी में भरना–बैगिंग और उबालना शामिल है; जैसे—स्वयं सहायता समूहों द्वारा प्रोत्साहन, संस्थान का निर्माण आदि।
- अधिक उपज कार्यों से जुड़ाव इन गतिविधियों के द्वारा वर्ष 2012-13 में सभी राज्यों में धान उत्पादन में सामान्य से अधिक महत्त्वपूर्ण बढ़ोतरी हुई।
- फसलों में अधिकतम बढ़ोतरी बिहार में दर्ज की गई और उसके बाद छत्तीसगढ़, झारखंड, उत्तर प्रदेश और असोम का नंबर है।

(ii) केसर पर राष्ट्रीय मिशन

- राष्ट्रीय कृषि विकास योजना आरकेवीवाई के तहत उप–योजना वर्ष 2010-11 में शुरू की गई। इसके तहत जम्मू–कश्मीर में केसर की कृषि को आर्थिक दृष्टि से पुनर्स्थापित करने के उद्देश्य से चार वर्ष में ₹ 288.06 करोड़ के बजट से सहयोग का प्रावधान था।
- योजना के तहत वर्ष 2010-11 में ₹ 39.44 करोड़, वर्ष 2011-12 और वर्ष 2012-13 प्रत्येक में ₹ 50-50 करोड़, जबकि वर्ष 2013-14 के लिए योजना अंतर्गत के लिए अलग से ₹ 100 करोड़ का प्रावधान किया गया।

(iii) पोषक अनाज

- वर्ष 2012-13 में ज्वार, बाजरा, रागी आदि के उत्पादन को प्रोत्साहित करने के लिए ₹ 175 करोड़ का प्रावधान रखा गया।
- इन फसलों के लिए फायदों के प्रति जागरूकता निर्माण हेतु प्रौद्योगिक/संसाधन का उन्नयन किया गया।
- एक हजार कॉम्पेक्ट ब्लॉकों के लगभग 25,000 गाँवों में कार्यक्रम कवर किये गये। आरकेवीवाई के तहत कार्यक्रम के लिए वर्ष 2013-14 में ₹100 करोड़ का प्रावधान किया गया।

(iv) त्वरित चारा विकास कार्यक्रम

- प्रौद्योगिकी उन्नयन के माध्यम से किसानों के लाभ तथा चारा उत्पादन को गति देने एवं वर्षभर चारे की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए 25,000 गाँवों में चारा विकास कार्यक्रम शुरू किया गया।
- यह कार्यक्रम वित्तीय वर्ष 2011-12 में ₹ 300 करोड़ के प्रावधान के साथ शुरू किया गया।
- इसके अतिरिक्त कार्यक्रम के लिए क्रमशः वर्ष 2012-13 में ₹ 200 करोड़ और वर्ष 2013-14 में ₹ 100 करोड़ का प्रावधान किया गया।

(v) अर्बन क्लस्टर के लिए सब्जियों की उपलब्धता

- शहरों के लिए सब्जियाँ उपलब्ध करवाने के लिए पहले शहरी इलाकों के लिए ताजी सब्जियों की आपूर्ति सुनिश्चित करने तथा साथ ही किसानों की आय बढ़ाने के उद्देश्य से वर्ष 2012-13 में ₹ 300 करोड़ जारी किए गए।
- इस कार्यक्रम को वर्ष 2013-14 में राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के तहत ₹ 200 करोड़ का प्रावधान कर शुरू किया गया।

(vi) ताड़ के तेल को प्रोत्साहन

- वर्ष 2011-12 में 60,000 हेक्टेयर में ताड़ के पौधारोपण के लिए ₹ 300 करोड़ का प्रावधान किया गया।
- किसानों को बाजार के साथ जोड़कर ताड़ के उत्पादन को लाभकारी बनाने की योजना तैयार की गई।
- वर्ष 2012-13 में इस योजना का कोष ₹ 100 करोड़ था, जिसे वर्ष 2013-14 में बढ़ाकर ₹ 150 करोड़ कर दिया गया।

(vii) पूरक प्रोटीन पर राष्ट्रीय मिशन

- राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के अंतर्गत यह सह–योजना वर्ष 2011-12 में शुरू की गई।
- योजना के प्रारम्भिक वर्ष में पशुधन विकास के माध्यम से पशु आधारित प्रोटीन संवर्धन को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से डेयरी फार्मिंग, सुअर पालन, बकरी और चुनिंदा ब्लॉकों में मछली पालन कार्यक्रम के लिए वर्ष 2012-13 में ₹ 500 करोड़ का प्रावधान था।

(viii) वर्षा क्षेत्र पोषित विकास कार्यक्रम

- इस योजना में वर्ष 2012-13 में ₹ 150 करोड़ का प्रावधान किया गया।
- छोटे और सीमांत किसानों की जीवन गुणवत्ता सुधारने के उद्देश्य से वर्ष 2013-14 में राष्ट्रीय कृषि विकास योजना में योजना राशि बढ़ाकर ₹ 250 करोड़ कर दी गई।

(ix) विदर्भ तीव्र सिंचाई विकास कार्यक्रम

- विदर्भ क्षेत्र में किसानों की भूमि को संरक्षित सिंचाई कार्यक्रम में लाने के लिए कार्यक्रम की घोषणा ₹ 300 करोड़ के प्रावधान के साथ वर्ष 2012-13 में की गई।
- वर्ष 2013-14 में भी ₹ 300 करोड़ का प्रावधान किया गया।

(x) एकीकृत कृषि विकास के लिए सार्वजनिक निजी भागीदारी

- राष्ट्रीय कृषि योजना के अंतर्गत 2012-13 में कृषि विकास की पायलट योजना के तहत निजी क्षेत्र के सहयोग में सरकारी सहायता से यह कार्यक्रम शुरू किया गया। उद्देश्य था–कृषि क्षेत्र की क्षमता वृद्धि।

(xi) न्यूट्री फार्म

- यह योजना राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के तहत महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम के रूप में शुरू की गई।
- पोषक तत्त्वों से भरपूर नई किस्मों के विकास के लिए इस योजना की शुरुआत की गई।
- यह फसलें हैं–लौह तत्त्व युक्त बाजरा, प्रोटीन समृद्ध मक्का आदि।
- 2013-14 में निम्न पोषक सर्वाधिक प्रभावित जिलों में ₹ 200 करोड़ के प्रावधान से जिंक युक्त गेहूँ की कृषि को प्रोत्साहित किया गया।

(xii) फसल विविधीकरण

- हरित क्रांति वाले राज्यों में 2013-14 में ₹ 5000 करोड़ की राशि के प्रावधान के साथ नई योजना की घोषणा की गई।
- योजना का उद्देश्य था किसानों को फसल विविधीकरण के लिए प्रोत्साहित करना, ताकि प्रौद्योगिकी नवाचार के द्वारा फसल विविधीकरण के लिए हरित क्रांति वाले राज्यों को विशेष महत्त्व दिया जा सके।

राष्ट्रीय बागवानी मिशन (एनएचएम)

- केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित यह योजना कृषि क्षेत्र में बागवानी; जैसे–फलों, सब्जियों, जड़ एवं कंद फसलों, मशरूम, मसालों, फूलों, सुगंधित पौधों के उत्पादन में समग्र रूप से वृद्धि के लिए बागवानी क्षेत्र में शुरू की गई।
- इस योजना के लिए 85 प्रतिशत योगदान केन्द्र और 15 प्रतिशत हिस्सेदारी राज्य सरकार को देनी है।

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन

- धान, गेहूँ और दालों के उत्पादन में वृद्धि के उद्देश्य से राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन वर्ष 2007-08 में शुरू हुआ।
- क्षेत्र विस्तार और उपज बढ़ाकर, मृदा की उर्वरता और उत्पादन क्षमता लौटाकर रोजगारों का सृजन करना और खेती पर निर्भर अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देकर 11वीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक इन अनाजों के उत्पादन में क्रमशः 10, 8, 2 मिलियन टन की वृद्धि का लक्ष्य था।
- मिशन की बेसिक रणनीति उन्नत प्रौद्योगिकी को प्रोत्साहित कर बढ़ावा देना था। उदाहरणतः किसानों की क्षमता निर्माण के साथ बीज, सूक्ष्म पोषक, मृदा संशोधन शुद्धता, सम्पूर्ण कीट प्रबंधन, फार्म मशीनरी व संसाधन संरक्षण, प्रौद्योगिकी लाभ पहुँचाना आदि योजना में शामिल था।
- एनएफएसएम के तहत प्रमुख गतिविधियों में धान, गेहूँ और दालों की उन्नत किस्मों के बीज का वितरण, पौध, फसल और मृदा आधारित जरूरत के अनुसार प्रबंधन, संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकी, ऊर्जा प्रबंधन, सक्षम जल, ऐप्लीकेशन टूल (यंत्र), कटाई प्रणाली पर आधारित प्रशिक्षण और उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले स्थानीय जिलों के लिए पुरस्कार आदि को शामिल किया गया।

राष्ट्रीय बाँस मिशन

- वर्ष 2006-07 में देश के 27 राज्यों में ये मिशन शुरू किया गया।

- इस मिशन का उद्देश्य बाँस क्षेत्र में, क्षेत्रवार समग्र विकास को प्रोत्साहित करना और क्षेत्र की आवश्यकता के अनुरूप योजना तैयार करना था।
- मिशन के तहत नर्सरियों की स्थापना, टिश्युकल्चर इकाइयों तथा वर्तमान को उन्नत बना, गुणवत्ता पूर्ण पौधारोपण सामग्री की उपलब्धता बढ़ाने के कदम उठाए गए।
- बाँस से बने उत्पादों, खासकर हस्तशिल्प उत्पादों के विपणन को सुधारने के उपाय भी किए गए।

राष्ट्रीय तिलहन और ताड़ तेल मिशन

- तिलहन, दालों, ताड़ के तेल और मक्का पर केन्द्र प्रायोजित योजना (आईएसओपीओएम): केन्द्र सरकार के तहत कार्यान्वित इस योजना को वर्ष 2004-05 में, देश की फसलों के क्षेत्र के विस्तार, उत्पादन और खेती को बढ़ावा देने के लिए शुरू किया गया।
- एनएफएसएम के साथ दालों को 01 अप्रैल, 2010 में शामिल किया गया, जबकि ताड़ के तेल के क्षेत्र–विस्तार के कार्यक्रम को 2011-12 में जोड़ा गया।

टिकाऊ कृषि के लिए राष्ट्रीय मिशन (NMSA)

- एनएमएसए आठ मिशनों में एक था जिसकी रूपरेखा जलवायु परिवर्तन के लिए राष्ट्रीय एक्शन प्लान के तहत की गई थी।
- इस योजना के अनुसार मिशन की नीतियाँ और कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए।
- यह कार्यक्रम जलवायु परिवर्तन पर प्रधानमंत्री परिषद् द्वारा स्वीकृत सिद्धांतों के अनुरूप था किसका लक्ष्य टिकाऊ कृषि के प्रसार के लिए 17 उत्पादों के माध्यम से भारतीय कृषि के दस महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों का विकास करना था।
- एनएमएसए, 12वीं पंचवर्षीय पुनर्नियोजित रचना मिशन के अंतर्गत संकल्पित वर्षा से सिंचित क्षेत्र विकास कार्यक्रम (आरएडीपी), लघु सिंचाई पर राष्ट्रीय मिशन (एनएमएमआई), जैविक कृषि पर राष्ट्रीय परियोजना (एनपीओएफ), मृदा स्वास्थ्य और उपजाऊपन के लिए राष्ट्रीय परियोजना प्रबंधन (एनपीएमएसएचएंडएफ) और मृदा और भूमि इस्तेमाल सर्वे ऑफ इंडिया भी इसके अंतर्गत सम्मिलित किए गए।

वर्ष 2017 एवं 2018 में पूछे गए प्रश्नों का संकलन

1. 'सामाजिक परिवर्तन किसकी पुस्तक है?
(A) मूर
(B) मैकाइवर एवं पेज
(C) मार्क्स
(D) गिलिन एवं गिलिन

2. अगस्त कॉम्टे के अनुसार समाज आधुनिक जटिल स्वरूप तक पहुँचने से पहले इनमें से किन विकास चरणों से गुजर चुका है?
(A) धार्मिक (B) तात्विक
(C) सकारात्मक (D) ये सभी से

3. हर्बर्ट स्पेन्सर ने सामाजिक विकास के मार्ग में प्रयुक्त इनमें से किन अवस्थाओं का वर्णन किया है?
(A) आदिम अवस्था
(B) सैनिक अवस्था
(C) औद्योगिक अवस्था
(D) ये सभी

4. भूमण्डल पर कितने प्रकार के समाज पाए जाते हैं?
(A) एक (B) दो
(C) तीन (D) चार

5. ग्रामीण क्षेत्र के अनुसूचित जनजाति के पास कृषि भूमि बहुत कम है,जो है उसकी सुरक्षा हेतु क्या उपाय किया गया है?
(A) ग्राम सभा को विशेष अधिकार देना
(B) सार्वजनिक उपयोग पर रोक लगाना
(C) रजिस्ट्रार को पंजीकरण के पूर्व विशेष ध्यान रखना
(D) गैरअनुसूचित को हस्तान्तरण जिलाधिकारी की आज्ञा से ही होगा

6. अफ्रीकन समाज को कहा जाता है–
(A) जनजातीय समाज
(B) कृषक समाज
(C) औद्योगिक समाज
(D) इनमें से कोई नहीं

7. भारतीय समाज को माना जाता है–
(A) जनजातीय समाज
(B) कृषक समाज
(C) औद्योगिक समाज
(D) ये सभी

8. अमेरिकन समाज को माना जाता है–
(A) जनजातीय समाज
(B) कृषक समाज
(C) औद्योगिक समाज
(D) ये सभी

9. जनजातीय समाज के लोग होते हैं–
(A) धार्मिक
(B) वस्तु–पूजा में विश्वास करने वाले
(C) टोटमवाद से प्रेरित
(D) उपर्युक्त सभी को मानने वाले

10. निम्नलिखित में से किस जनजाति में बहुपति विवाह प्रथा पाई जाती है?
(A) मारिया (B) सांसी
(C) जौनसारी (D) खरवार

11. निम्नलिखित में से कौन–से सूचकांक सामाजिक विकास को इंगित करते हैं?
(A) मानव विकास सूचकांक
(B) मानव निर्धनता सूचकांक
(C) लिंग सम्बद्ध विकास सूचकांक
(D) उपर्युक्त सभी

12. टोडा किस राज्य की जानजाति है?
(A) राजस्थान (B) तमिलनाडु
(C) उत्तराखण्ड (D) हिमाचल प्रदेश

13. निम्नलिखित को सुमेलित कीजिए–

राजस्तरीय अधिनियम (एक्ट)	**वर्ष**
(a) यू.पी. म्यूनिसिपैलिटीज एक्ट	1. 1916
(b) बिहार वेस्टलैण्ड (रिक्लेमेशन, कल्टीवेशन एण्ड इम्प्रूवमेंट) एक्ट	2. 1946
(c) दिल्ली रैस्ट्रिक्सन ऑफ यूजेज ऑफ लैंड एक्ट	3. 1964
(d) बंगाल स्मोक न्यूसेन्स एक्ट	4. 1905

	(a)	(b)	(c)	(d)
(A)	2	3	4	1
(B)	1	2	3	4
(C)	3	1	2	4
(D)	3	4	1	2

14. किसने कहा है कि 'समाज एक अधिजैविक व्यवस्था है'?
(A) मैकाइवर और पेज
(B) क्रिग्सले डेविस
(C) हरबर्ट स्पेन्सर
(D) ऑगबर्न

15. निम्नलिखित में से कौन–सी मानव समाज की विशेषता नहीं है?
(A) सांस्कृतिक सीख के अनुसार व्यवहार करना
(B) प्रत्यक्ष सीख के द्वारा कार्य करना
(C) पूर्व ज्ञान सम्बन्धी प्रतीकों का होना
(D) नैतिकता की धारणा को महत्त्व देना

उत्तरमाला

1. (A)	**2.** (D)	**3.** (D)	**4.** (C)
5. (D)	**6.** (A)	**7.** (B)	**8.** (C)
9. (D)	**10.** (C)	**11.** (D)	**12.** (B)
13. (B)	**14.** (C)	**15.** (B)	

❑❑